दीनों पर प्रेम

पाठ्य-पुस्तक के प्रश्नोत्तर

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

प्रश्न 1. ईश्वर का असली निवास कहाँ है ?
(क) मन्दिर-मस्जिद में
(ख) अमीरों के महलों में
(ग) दीन-दुखियों के झोंपड़ों में
(घ) धार्मिक समारोहों में।

उत्तर: (ग) दीन-दुखियों के झोंपड़ों में

प्रश्न 2. हमारे कल्पित ईश्वर का नाम क्या है ?
(क) दीनबन्धु
(ख) लक्ष्मीनारायण
(ग) त्रिलोकपति
(घ) रसिक बिहारी

उत्तर: (क) दीनबन्धु

अतिलघूत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न 3. "हम नाम के आस्तिक हैं।" लेखक ने ऐसा क्यों कहा है ?

उत्तर: लेखक ने ऐसा इसलिए कहा है कि एक ओर तो हम ईश्वर को दीनबन्धु कहते हैं और दूसरी ओर दीनों से घृणा करके ईश्वर का अपमान करते हैं।

प्रश्न 4. दीनों की सेवा न करने वाले व्यक्ति को लेखक आस्तिक क्यों नहीं मानता है ?

उत्तर: ईश्वर में विश्वास करने वाला आस्तिक होता है। जो ईश्वर के प्रिय दोनों का अपमान करता है वह ईश्वर विरोधी है। इसलिए वह आस्तिक नहीं हो सकता।

प्रश्न 5. संधि विच्छेद कीजिए|
त्रिलोकेश्वर, अत्याचार, परमात्मा, महात्मा।

उत्तर: त्रिलोकेश्वर – त्रिलोक + ईश्वर
अत्याचार – अति + आचार

परमात्मा – परम् + आत्मा
महात्मा – महा + आत्मा

प्रश्न 6. निम्नलिखित सामासिक पदों का विग्रह कीजिए तथा समास का नाम बताइएदीन-दुःखी, दीन-बन्धु, रत्नजटित, स्वर्ण-सिंहासन, ईश्वर- भक्त, दरिद्र-नारायण, धन-दौलत, धर्म-कर्म, टूटी-फूटी, राज-मंदिर।

उत्तर:

समस्त पद	विग्रह	समास का नाम
दीन-दु:खी	दीन और दुखी	द्वन्द्व समास
दीन-बन्धु	दीनों का बन्धु है जो परमात्मा	बहुव्रीहि समास
रत्न जड़ित	रत्नों से जड़ा हुआ	तत्पुरुष समास
स्वर्ण-सिंहासन	स्वर्ण से निर्मित सिंहासन	कर्मधारय समास
ईश्वर-भक्त	ईश्वर का भक्त	तत्पुरुष समास
दरिद्र-नारायण	दरिद्र रूपी नारायण	कर्मधारय समास
धन-दौलत	धन और दौलत	द्वन्द्व समास
धर्म-कर्म	धर्म और कर्म	द्वन्द्व समास
टूटी-फूटी	टूटी और फूटी	द्वन्द्व समास
राज-मंदिर	राजा का मंदिर	तत्पुरुष समास

लघूत्तरात्मक प्रश्न

प्रश्न 7. धनी व्यक्ति के स्वर्ग-प्रवेश के बारे में महात्मा ईसा के क्या विचार हैं ?

उत्तर: महात्मा ईसा के अनुसार दीन-दुर्बल मनुष्यों पर अत्याचार करने वाले धनी लोग परमात्मा को नहीं पा सकते। वैभव की चमक से अंधे बने हुए धनवानों को स्वर्ग का द्वार दिखाई नहीं दे सकता। उसमें प्रवेश की बात तो दूर है। ईसा कहते हैं कि सुई के छेद में ऊँट भले ही निकल जाये लेकिन धनवान स्वर्ग के राज्य में प्रवेशे कदापि नहीं पा सकता।

प्रश्न 8. अब 'लक्ष्मीनारायण' को 'दरिद्र-नारायण' बनाना ही पड़ेगा, क्यों और किस प्रकार ?

उत्तर: धनी लोग तो सदा से लक्ष्मी-पति नारायण के पुजारी रहे हैं। उनके भगवान भी परम वैभवशाली हैं। लेकिन धर्मग्रन्थ तो भगवान को दीनबन्धु और दरिद्र नारायण बताते हैं। लक्ष्मी नारायण के धनवान भक्तों ने दोनों पर अत्याचार करने में, उनकी उपेक्षा करने में, कोई कसर नहीं छोड़ी। अब दीन, दुर्बल और दलितों की इनसे रक्षा करनी होगी। दीनों को गले लगाना होगा। यदि ईश्वर की कृपा प्राप्त करनी है, स्वर्ग में प्रवेश पाना है, तो दरिद्र-नारायण की पूजा करनी होगी। ऐसा धनिकों के हृदय परिवर्तन से, उनकी दीन-दुखियों की सेवा के लिए प्रेरित करने से हो सकता है। समाज के दलित और दुर्बल लोगों की सुरक्षा का भार शासन और समाज दोनों पर होना चाहिए।

प्रश्न 9. दीन-दुर्बल का दिल दुःखाना भगवान का मंदिर ढहाना है।" लेखक के उक्त विचार की समीक्षा कीजिए।

उत्तर: भगवान का एक नाम दीनबन्धु भी है। जो दोनों का बन्धु है उसे दोन कितने प्यारे हो सकते हैं, यह कहने की आवश्यकता नहीं। यदि कोई किसी दीन के दिल को दुख पहुँचाता है तो वह एक प्रकार से भगवान के मंदिर ढहाने जैसा पाप करता है क्योंकि भगवान तो सदा दीन-दुखियों के मन में ही विराजते हैं। जब दिल पर चोट होगी तो प्रभु के मंदिर पर ही आघात होगा। लेखक की उक्ति में बड़ी सच्चाई है। उसका आशय यही है कि दुर्बल को कभी मत सताओ क्योंकि उसे सताना भगवान को पीड़ा पहुँचाना है।

प्रश्न 10. "मरे बैल की चार्म सों लोह भसम हुवै जाय।" 'मरे बैल के चमड़े से लोहे के भस्म होने के कथन का क्या आशय है ?

उत्तर: प्रस्तुत कथन को साधारण अर्थ यह है कि मरे हुए बैल के चमड़े से बनाई गई धोंकनी से जब आगे की भट्टी में हवा धोंकी जाती है तो उसके ताप से कठोर लोहा भी राख बन जाता है। कवि के कहने का आशय यह है कि दुर्बल व्यक्ति जब सताए जाने पर जोर से आह भरता है तो इसकी कराह सताने वाले का सर्वनाश कर देती है। जब मरे बैल की चमड़ी से निकली आह (हवा) लोहे जैसी कठोर धातु को जलाकर राख कर सकती है तो दुखी जो जीवित मनुष्य होता है, उसकी हाय यो आह कितनी विनाशकारी हो सकती है। इसलिए कभी भूलकर भी किसी दीन-दुखी को कष्ट नहीं पहुँचाना चाहिए क्योंकि उसके रक्षक स्वयं दीन-बन्धु होते हैं।

निबन्धात्मक प्रश्न

प्रश्न 11. "दरिद्र की सेवा ही सच्ची सेवा है" लगभग 200 शब्दों में अपने विचार व्यक्त कीजिए।

उत्तर: हमारे जीवन में सेवा के अनेक रूप देखने में आते हैं। भगवान की सेवा-पूजा, माता-पिता की सेवा, नौकर द्वारा मालिक की सेवा, धन की लालसा से धनवान की सेवा आदि-आदि। इन सभी सेवा-भावों में सेवा के बदले कुछ प्राप्त होने की बात छिपी है। चाहे कृपा मिले, आशीर्वाद मिले, वेतन मिले या धन-सम्पत्ति मिले सेवा के बदले मेवा पाने की इच्छा तो रहती है। यदि दीन, दुखी और दरिद्रजन की सेवा की बात आए तो बदले में कुछ पाने की संभावना न के बराबर ही होती है। जो स्वयं दूसरों की कृपा और सहायता के लिए तरसते हों, वे भला किसी को क्या दे सकते हैं। अधिक-से-अधिक वे भगवान से सेवा करने वाले के लिए दुआ माँग सकते हैं। अतः सच्ची अर्थात् नि:स्वार्थ सेवा, यदि कोई कही जा सकती है तो वह दरिद्रजनों की, दुखियों की सेवा ही है।

आज तो यह कथन और भी सही दिखाई देता है। आज के समाज में दरिद्र व्यक्ति सबसे अभागा है। उसका न कोई सच्चा मित्र है, न रक्षक है, न अन्नदाता है। हर चीज आज पैसे से नापी-तोली जाती है। धनवान के लिए मित्रों, शुभचिंतकों, रक्षकों, सेवकों आदि किसी की कमी नहीं। ये लोग तो पैसा देते और सेवा लेते हैं। सच्ची सेवा से सेवा करने वाले के मन को बड़ी शांति और सुख मिलता है। समर्थ लोगों को किसी की सेवा की आवश्यकता नहीं होती। जो लोग इनकी सेवा करते हैं उन्हें बदले में उपेक्षा या थोड़ा बहुत लाभ ही मिलता है। अतः दरिद्रों की सेवा ही सच्ची सेवा है जिसके पीछे सेवक का कोई स्वार्थ या कामना नहीं होती।

प्रश्न 12. भावार्थ स्पष्ट कीजिए
1. दीन-दुखियों के दर्द का मर्मी ही महात्मा है।
2. दीन-बन्धु की ओट में हम दोनों का खासा शिकार खेल रहे हैं।
3. प्रेमी का उदार हृदय तो दया का आगार होता है।

उत्तर: 1. महात्मा या महान आत्मा वाला कौन है, यह किसी की वेश-भूषा, आकार-प्रकार या बाहरी व्यवहार के आधार पर नहीं बताया जा सकता। इसका निर्णय तो व्यक्ति के विचारों और भावनाओं के आधार पर ही किया जा सकता है। लेखक का इस कथन में यही संकेत है। जो व्यक्ति दीन-दुखियों के मन की पीड़ा को जान सके और उनको कष्टों से उबार सके, वही सच्चा महात्मा है। महापुरुषों का हृदय बड़ा उदार होता है। उनकी आत्मा (अपनेपन) का दायरा बहुत बड़ा होता है। जिन दीन-दुखियों से लोग आँखें फेर लेते हैं उन्हीं को हृदय से लगाने वाला महात्मा है।

2. दीनबन्धु भगवान का भक्त कहलाने का अधिकार उसी को है जो दोनों को गले लगाए, उनकी दीनता और दुख दूर करे। ऐसे व्यक्ति पर ही ईश्वर प्रसन्न होगी। पर जो दीनों से घृणा करता है किन्तु दीनबन्धु ईश्वर का भक्त होने का दावा करता है वह तो पाखण्डी ही कहा जाएगा। आज के ईश्वर-भक्त ऐसा ही दोमुँहा आचरण करते दिखाई देते हैं। वे दीनबन्धुता की आड़ में दोनों की शोषण कर रहे हैं। ऐसे व्यक्ति को तो आस्तिक कहलाने का भी अधिकार नहीं है। वह वास्तव में लक्ष्मी नारायण का उपासक है, दरिद्रनारायण का नहीं।

3. जो व्यक्ति सबके प्रति प्रेमभाव रखने वाला होता है उसका हृदय बड़ा उदार, कोमल और दया का भंडार होता है। अतः एक प्रेमी व्यक्ति किसी दीन-दुर्बल को दुख पहुँचाने की बात कभी सोच भी नहीं सकता। वह दीनजनों को प्रेम और दया के भाव से उमगकर गले लगाता है। ऐसे व्यक्ति ही भगवान के कृपापात्र होते हैं। ये प्रेमी लोग इधर संसार में दीन-दुखियों के लिए अपने मन-मंदिर के द्वार खोले रहते हैं तो उधर परमेश्वर भी इन्हें अपने हृदय में बसाने की प्रतीक्षा किया करता है।

अन्य महत्वपूर्ण प्रश्नोत्तर

अतिलघूत्तरीय प्रश्नोत्तर

प्रश्न 1. यदि हम वास्तव में आस्तिक हैं, तो लेखक के अनुसार हमें क्या करना चाहिए ?

उत्तर: हमें सबसे पहले दीन लोगों को प्रेम से गले लगाना चाहिए।

प्रश्न 2. वियोगी हरि के अनुसार सच्चा आस्तिक कौन है ?

उत्तर: हर दुख में सच्चे मन से दोनों की सेवा करने वाला तथा दीनों से प्रेम करने वाला ही सच्चा आस्तिक है।

प्रश्न 3. वियोगी हरि के अनुसार ईश्वर की हँसी उड़ाना क्या है ?

उत्तर: दीनों का शोषण करके भगवान को भव्य मन्दिरों में धूमधामं और वैभव के साथ पूजना तथा उसे 'दीनबन्धु कहना ईश्वर की हँसी उड़ाना है।

प्रश्न 4. किस उदाहरण से सिद्ध होता है कि भगवान दीनबन्धु हैं ?

उत्तर: भगवान श्रीकृष्ण ने सुदामा जैसे दीन-हीन से मित्रता की तथा दुर्योधन के राजसी सत्कार को ठुकराकर विदुर की शाक-भाजी बड़ी प्रेमपूर्वक खाई। इससे सिद्ध होता है कि भगवान 'दीनबन्धु' हैं।

प्रश्न 5. दीनबन्धु को पाने के लिए वियोगी हरि ने क्या परामर्श दिया है ?

उत्तर: वियोगी हरि ने दीनबन्धु को पाने के लिए धन-दौलत को ठुकराकर, दीनों के बीच जाकर उनकी सेवा करने का परामर्श दिया है।

प्रश्न 6. लेखक (वियोगी हरि) के अनुसार ईश्वर के दर्शन के लिए कहाँ जाना चाहिए ?

उत्तर: ईश्वर के दर्शन पाने के लिए मन्दिर, मस्जिद, गिरजाघर और गुरुद्वारों में न जाकर मजदूरों, किसानों, अनाथों, पतितों तथा अछूतों के बीच जाना चाहिए।

लघूत्तरात्मक प्रश्नोत्तर

प्रश्न 1. दीनों पर प्रेम' पाठ के लेखक के अनुसार दीनबन्ध ईश्वर हम पर कब और क्यों प्रसन्न होगा ?

उत्तर: दीनबन्धु' शब्द का अर्थ है दीनजनों का भाई या सहायक। जब हम ईश्वर को दीनबन्धु मानते हैं, तो स्वाभाविक है कि वह उसी से प्रसन्न होंगे जो दोनों को गले लगाए, उनकी सहायता करे और सेवा करे। दीनजन ईश्वर को अत्यन्त प्रिय हैं। सुदामा, शबरी और विदुर आदि के उदाहरण इसके प्रमाण हैं। भगवान दीन के हृदय में विराजते हैं। अतः दोनों के हृदयों को कष्ट पहुँचाना भगवान को कष्ट पहुँचाना है। भगवान तभी प्रसन्न होंगे जब दीन-दुखियों का सम्मान होगा, उनकी सेवा होगी।

प्रश्न 2. लेखक ने दोनों पर प्रेम' निबन्ध में सबसे भारी धर्म-विद्रोह किसे बताया है और क्यों ?

उत्तर: लेखक ने दीन-दुर्बलों को सताना सबसे बड़ा धर्म-विरोधी कार्य बताया है। दीन के हृदय में दीनबन्धु भगवान निवास करते हैं। दीन का हृदय ही सच्चा मंदिर, मस्जिद और गिरजा है। अतः दीन के दिल को पीड़ा पहुँचाना भगवान के मंदिर को ढहा देने जैसा महान अधर्म है, पाप है।

प्रश्न 3. परमात्मा का दीन-प्रेमी के प्रति क्या भाव रहता

उत्तर: परमात्मा जब देखता है कि प्रेमी व्यक्ति दिन-रात दीन-हीनों की सेवा में लगा हुआ है तो उसे बड़ी प्रसन्नता होती है। वह स्वर्ग में प्रेमी के स्वागत के लिए अपने हृदय के द्वार को खोल देता है। उसके आगमन के लिए उत्सुक बना रहता है। इस प्रकार दीन-प्रेमी दीनबन्धु का कृपा-पात्र बन जाता है।

प्रश्न 4. "दरिद्र सेवा ही सच्ची ईश्वर सेवा है।" लेखक के इस कथन पर दोनों पर प्रेम' निबन्ध के आधार पर टिप्पणी लिखिए।

उत्तर: दरिद्रों के मन मंदिर में स्वयं दीनबन्धु विराजते हैं। इसी कारण प्रेमी दीन को अपने हृदय में स्थान देता है। यदि वह दरिद्रों और दोनों की सेवा करेगा तो भगवान की सेवा अपने आप हो जाएगी। इसलिए मंदिरों, तीर्थों और आश्रमों में भटकने के बजाय दीनों की सेवा करो। इससे बढ़कर और कोई धर्म नहीं।

प्रश्न 5. दीनों पर प्रेम' निबन्ध द्वारा लेखक समाज को क्या संदेश देना चाहता है ?

उत्तर: प्रस्तुत निबंध द्वारा दिया जाने वाला संदेश है-समाज में संवेदनशीलता का भाव जगाने पर बल देना। समाज में सम्पन्न और समर्थ लोग तो सदा ही सुख से रह सकते हैं। निर्धन, दुर्बल, दलित, दीन लोग भी मनुष्यों जैसा सम्मानजनक जीवन बिता सकें, यही एक सभ्य समाज की कसौटी है। लेखक ने अनेक तर्कों, भावनाओं और उदाहरणों द्वारा दीनों के प्रति हमारे कर्तव्य का हमें स्मरण कराया है।

प्रश्न 6. आज के समाज में धर्म-पालन में क्या विरोधाभास दिखाई देता है ?'दीनों पर प्रेम' निबंध को ध्यान में रखते हुए बताइए।

उत्तर: आज समाज में धर्म के नाम पर विशाल मंदिर बनवाना, बड़े-बड़े आयोजन करना, तीर्थ-यात्राएँ करना आदि चल रहा है। लगता है जैसे धन के बल पर धर्म को खरीद लेने की कोशिश हो रही है। संतों और धर्माचार्यों के उपदेशों में जो बड़ी-बड़ी बातें की जाती हैं वे उनके और भक्तों के आचरण में दिखाई नहीं देतीं। दीन-बंधु का गुणगान करने वाले धार्मिक दीनों को टके सेर भी नहीं पूछते हैं। दीन को ठुकराना और स्वयं को दीनबन्धु भगवान का बड़ा भारी भक्त दिखाना, यही विरोधाभास आज धर्माचरण में दिखाई दे रहा है।

निबन्धात्मक प्रश्नोत्तर

प्रश्न 1. दीनों पर प्रेम' निबंध लिखने के पीछे लेखक का मल उद्देश्य क्या है ? लिखिए।

उत्तर: दीनों पर प्रेम' निबंध लिखने में लेखक का मूल उद्देश्य समाज के धनवान और समर्थ लोगों का ध्यान, समाज के दीन-हीन, दुर्बल और ठुकराये जाने वाले वर्ग की ओर आकर्षित करना है। ईश्वर ने उन्हें सम्पन्न बनाया है। इस सुअवसर का उपयोग उन्हें दीन-दुखियों की सेवा करके ईश्वर की कृपा प्राप्त करने में करना चाहिए। केवल ईश्वर या अल्लाह के बड़े-बड़े मंदिर और विशाल मस्जिदें बनवा देने से या बड़ी धूमधाम से धार्मिक आयोजन कर देने से ईश्वर की सेवा नहीं होती। ईश्वर की सच्ची सेवा दीनों, कंगालों, भूखों, बीमारों की सेवा करने में होती है।

यदि भगवान की कृपा पानी है तो उस दीनबन्धु के परमप्रिय, दीनजनों को गले लगाना होगी। उनकी झुग्गी-झोंपड़ियों में जाकर उनके सुख-दुख में भागीदार बनना होगा। दीनों की सेवा में जो परम शांति और सुख मिलता है वह धन के बल पर सँजोए गए विलास के साधनों में नहीं मिल सकता। धन का सही उपयोग करने पर मन में चिन्ताएँ नहीं रहतीं। लेखक ने इस निबंध में इसी सच्चे धर्म के पालन का धनिकों को परामर्श दिया है।

प्रश्न 2. भगवान का हृदय दीनों का वास स्थान है। 'दीनों पर प्रेम' पाठ के आधार पर स्पष्ट कीजिए।

उत्तर: वियोगी हरि के अनुसार ईश्वर जहाँ नहीं है, लोग वहाँ उसे पाने की कोशिश में लगे रहते हैं। ईश्वर हमें मंदिरों, मस्जिदों और गिरजों में नहीं मिलेगा। उसके दर्शन तो दुखियों के दुख, भूखों की भूख और दोनों की दीनता दूर करने में होंगे। ईश्वर के दर्शन के लिए हमें दीन-हीनों, असहायों, मजदूरों, किसानों की टूटी झोंपड़ियों में जाना होगा। एक प्रेमी के हृदय में सदा दीनजनों की सेवा का भाव रहता है। दीनजन अपने दुखों से मुक्ति के लिए दीनबन्धु भगवान को अपने मन मंदिर में बसाए रखते हैं। केवल दीन-दरिद्र ही एक प्रेमी के हृदय का आधार होते हैं। दीनजनों की सेवा ही ईश्वर की सच्ची सेवा है। ईश्वर का सच्चा भक्त वही है जिसके हृदय में दोनों के लिए दया का भाव है। ईश्वर की कृपा सदा दीनों पर प्रेम बरसाने वाले पर बनी रहती है। अतः स्पष्ट है कि भगवान का हृदय दीनों का वास-स्थान है।

-वियोगी हरि

पाठ-परिचय

प्रस्तुत निबंध में लेखक ने समाज के दीन और दुखी व्यक्तियों की सेवा को ही सच्ची ईश्वर सेवा बताया है। ईश्वर को दीनबन्धु कहा जाता है। अतः ईश्वर में हमारे विश्वास का यही प्रमाण है कि हम दोनों से प्रेम करें। जिसके हृदय में प्रेमभाव होता है वह कभी दीन को सता ही नहीं सकता। उसे दीन में अपने भगवान के दर्शन होते हैं। जो दीन-दुखियों के लिए अपने हृदय का द्वार खोल देता है, भगवान उसके लिए अपना द्वार खुला रखते हैं। अतः दरिद्र जन की सेवा ही सच्ची ईश्वर-सेवा है। दोनों पर दया करने वाला ही सच्चा आस्तिक, ज्ञानी, भक्त, प्रेमी, महात्मा और पीर है।

शब्दार्थ-तिरस्कार = अपमान। सुश्रूषा = देखभाल, उपचार, सेवा। कल्पित = कल्पना किया हुआ, माना हुआ। घिनात = घृणा करते हैं। सनातनी = सदा से चली आई। हजरत = आदरणीय, श्रीमान। दीदार = दर्शन। गिरजा = चर्च। आगार = भण्डार, घर । मर्मभेदिनी = हृदय में चुभ जाने वाली, बहुत कष्टदायक। आह्वान = पुकार । पीर = मुसलमान संत । पीर = पीड़ा, कष्ट। बेपीर = निर्दयी, कठोर।

प्रश्न 1. लेखक वियोगी हरि का जीवन-परिचय लिखिए।

उत्तर: लेखक परिचय जीवन-परिचय-वियोगी हरि का जन्म 1895 ई. में हुआ। बाल्यकाल से ही उनकी अभिरुचि साहित्य और दर्शन के प्रति थी। उन्होंने अस्पृश्यता निवारण से सम्बन्धित एक लेखमाला 1920 ई. में कानपुर से प्रकाशित 'प्रताप' में लिखी थी। उन्होंने गाँधीजी की 'हरिजन सेवक' पत्रिका का सम्पादन कार्य भी किया। उनकी मृत्यु 1988 ई. में हुई। साहित्यिक विशेषताएँ-वियोगी हरि आधुनिक ब्रजभाषा के प्रमुख कवि तथा कुशल गद्यकार हैं। उनके गद्यगीत चिन्तन प्रधान एवं व्यंग्यात्मक हैं। उन्होंने वर्क्स विषय के अनुरूप हिन्दी और संस्कृत की काव्योक्तियाँ उद्धृत कर अपने निबन्धों को प्रभावशाली बनाया है। रचनाएँ-साहित्य विहार, वीर सतसई, मेवाड़ केसरी, प्रेम शतक, प्रेम पथिक, सन्तवाणी, वीर विरुदावली, चरखे की पूँज, संक्षिप्त सूरसागर, सन्त सुधाकर आदि हैं।

महत्वपूर्ण गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्याएँ

प्रश्न 2. निम्नलिखित गद्यांशों की सप्रसंग व्याख्याएँ कीजिए

1. हम नाम के ही आस्तिक हैं। हर बात में ईश्वर का तिरस्कार करके ही हमने आस्तिक की ऊँची उपाधि पाई है। ईश्वर का नाम दीनबन्धु है। यदि हम वास्तव में आस्तिक हैं, ईश्वर भक्त हैं तो हमारा यह पहला धर्म है कि दोनों को प्रेम से गले लगाएँ, उनकी सहायता करें, उनकी सेवा करें, उनकी शुश्रूषा करें। तभी तो दीनबन्धु ईश्वर हम पर प्रसन्न होगा। पर हम ऐसा कब करते हैं? हम तो दीन दुर्बलों को ठुकराकर ही आस्तिक या दीनबन्धु भगवान के भक्त आज बन बैठे हैं। दीनबन्धु की ओट में हम दोनों को खासा शिकार खेल रहे हैं। (पृष्ठ-19)

संदर्भ तथा प्रसंग-प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्य-पुस्तक 'हिंदी प्रबोधिनी' के दोनों पर प्रेम' नामक पाठ से लिया गया है। इस अंश में लेखक श्री वियोगी हरि बता रहे हैं कि सच्ची
आस्तिक-ईश्वर में विश्वास रखने वाला कौन है?

व्याख्या-लेखक कहता है कि आज अधिकतर लोग केवल कहने भर के आस्तिक या ईश्वर विश्वासी हैं। व्यवहार और आचरण में लोग बात-बात में ऐसे काम करते हैं जिनसे ईश्वर का अपमान होता है। इतने पर भी ऐसे लोग स्वयं को बड़ा भारी आस्तिक दिखाने का ढोंग किया करते हैं। ईश्वर को सभी धर्मों में दीन-दुखियों का सहायक कहा जाता है। यदि हमें वास्तव में ईश्वर में विश्वास करने वाले हैं, ईश्वर के सच्चे भक्त हैं तो हमारा सबसे पहला कर्तव्य दीन-दुखियों को अपनाकर उनकी हर प्रकार से सहायता करना है। दोनों की हर दुख में सच्चे मन से सेवा करें। उनके कष्टों को दूर करने का प्रयत्न करें। तभी हम आस्तिक कहलाने के अधिकारी हो सकते हैं। तभी हमें ईश्वर की कृपा प्राप्त होगी। परन्तु आज समाज में ऐसा कहीं दिखाई नहीं देता। समाज के धनवान, समर्थ और नामी लोग दीन-दुखियों की उपेक्षा करके, उन्हें उनके हाल पर छोड़कर, दीनबन्धु भगवान के भक्त होने का दावा करते रहते हैं। भगवान को दीनबन्धु कहने वाले लोग ही भगवान की आड़ लेकर, दीनों और निर्धनों का अपने स्वार्थ के लिए शोषण करते दिखाई देते हैं।

विशेष-
(1) भाषा साहित्यिक है। शैली भावात्मक है।
(2) मुहावरों के प्रयोग से कथन को प्रभावशाली बनाया गया

2. रहा हो, कभी ईश्वर का दीनबन्धु नाम पुरानी, सनातनी बात है, कौन काटे? पर हमारा भगवान दोनों का भगवान नहीं है। हरे, हरे! वह उन घिनौनी कुटियों में रहने जाएगा? रत्नजड़ित स्वर्ण-सिंहासन पर विराजने वाला ईश्वर उन भुक्कड़ कंगालों के कटे-फटे कंबलों पर बैठने जाएगा? वह मालपुआ और मोहन भोग लगाने वाला भगवान इन भिखारियों की रूखी-सूखी रोटी खाने जाएगा? कभी नहीं हो सकता। हम अपने बनवाए हुए विशाल राजमंदिर में उन दीन-दुर्बलों को आने भी नहीं देंगे। उन पतितों और अछूतों की छाया तक हम अपने खरीदे हुए खास ईश्वर पर न पड़ने देंगे। (पृष्ठ-19)

सन्दर्भ तथा प्रसंग-प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्य-पुस्तक 'हिंदी प्रबोधिनी' के 'दीनों पर प्रेम' नामक पाठ से लिया गया है। इस अंश में वियोगी हरि ने उस समय की कई सामाजिक समस्याओं पर व्यंग्य किया है। दरिद्र लोगों और अछूत कहे जाने वालों के मंदिरों में प्रवेश पर लगी रोक पर लेखक ने प्रश्न खड़े किए हैं।

व्याख्या-कभी प्राचीन समय में भगवान का दीनबन्धु होना सभी मानते होंगे। पर आज हमने अपने भगवान को दीनों का बन्धु नहीं रहने दिया है। हमारा भगवान तो अमीरों का भगवान बन गया है। धनी लोगों ने भगवान को रत्नों से जड़े सोने के सिंहासन पर बैठने का और भव्य मंदिरों में निवास करने का आदी बना दिया है। अब उनका यह भगवान गरीबों की गंदी झोंपड़ियों में, दोनों के बीच कैसे रह पाएगा? वह दीनबंधु

कैसे बन पाएगा। भाव यह है कि धन ने धर्म को खरीद लिया है। दीनजनों और दीनबंधु के बीच वैभव की दीवार खड़ी कर दी है। हम मंदिरों में भगवान को बड़े स्वादिष्ट भोजन परोसते हैं। छप्पन भोगों का आयोजन करते हैं। यह दीन और निर्धन लोगों की हँसी उड़ाना जैसा लगता है। फटे-पुराने कंबलों में जाड़े बिताने वाले और रूखी-सूखी रोटियाँ खाकर गुजारा करने वाले भिखारियों की ऐसे धनवान भगवान तक कैसे पहुँच हो सकती है। हमने समाज के कई वर्गों को पापी, अछूत नाम दे रखे हैं। हम कल तक उन्हें मंदिरों में प्रवेश नहीं करने देते थे। यह ठीक है कि कानून बनाकर उन्हें अधिकार दिलाया गया है लेकिन सरकार के बजाय धर्माचार्यों का यह कर्तव्य बनता है कि भगवान के सामने मनुष्य-मनुष्य के बीच कोई भेदभाव न होने दें।

विशेष-
(1) भाषा में तत्सम, तद्भव तथा अन्य भाषा (उर्दू) के शब्दों का सुन्दर मेल है।
(2) शैली व्यंग्यात्मक और अंधपरम्पराओं पर चोट करने वाली है।

3. दीन-दुर्बल को अपने असह्य अत्याचारों की चक्की में पीसने वाला धनी परमात्मा के चरणों तक कैसे पहुँच सकता है? धनान्ध को स्वर्ग का द्वार दीखेगा ही नहीं, महात्मा ईसा का यह वचन क्या असत्य है? यदि तू सिद्ध पुरुष होना चाहता है तो जो कुछ धन दौलत तेरे पास हो, वह सब बेचकर कंगालों को दे दे। तुझे अपना खजाना स्वर्ग में सुरक्षित रखा मिलेगा। तब, आ और मेरा अनुयायी हो जा। मैं तुझसे सच कहता हूँ कि धनवान के स्वर्ग के राज्य में प्रवेश की अपेक्षा ऊँट का सुई के छेद में से निकल जाना कहीं आसान है।”
(पृष्ठ-20)

सन्दर्भ तथा प्रसंग-प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्य-पुस्तक ‘हिंदी प्रबोधिनी’ के ‘दीनों पर प्रेम’ नामक पाठ से लिया गया है। इस अंश में लेखक ने ईसा के कथन का हवाला दिया है कि ईश्वर की कृपा पाने के लिए धन-सम्पत्ति का त्याग करना परम आवश्यक है।

व्याख्या-दीनजन : भगवान को परम प्रिय हैं। अतः उन पर घोर अत्याचार करने वाले धनी लोग परमात्मा को कभी नहीं पा सकते। ईसा ने कहा कि यदि मनुष्य ज्ञानवान होना चाहता है तो उसे अपनी धन-सम्पत्ति का मोह त्यागना होगा। अपना सब कुछ गरीबों को बाँट देना होगा। दीन-दुखियों को दिया गया दान कभी बेकार नहीं जाता। मनुष्य संसार में जितना और जो कुछ दुखियों की सेवा में लगाता है वह सब उसे स्वर्ग में सुरक्षित मिल जाता है। धन-दौलत को दोनों की सेवा में लगाकर मनुष्य को ईसा अपनी शरण में आने और उनके उपदेशों का पालन करने का संदेश देते हैं। ईसा अपने शिष्यों को पूरा विश्वास दिलाते हैं कि चाहे सुई के छेद में से ऊँट भले ही निकल जाय लेकिन एक धनवान को भगवान के स्वर्ग-राज्य में प्रवेश कर पाना सम्भव नहीं हो सकता। धनी व्यक्ति दीन लोगों की उपेक्षा करता है। उसमें लोभ, लालच, झूठ, स्वार्थ भाव, निर्बल लोगों का शोषण आदि दुर्गुण
आ जाते हैं। अतः वह ईश्वर का कृपा-पात्र नहीं बन सकता।

विशेष-
(1) धन कमाने में और उसका उपयोग करने में मनुष्य उचित-अनुचित उपाय अपनाता है। दोनों की दुर्दशा पर कभी पिघलता नहीं है। फिर उस पर दीनबन्धु भगवान कैसे प्रसन्न हो सकते हैं। यह लेखक का संकेत है।
(2) भाषा सरल है। शैली उपदेशात्मक है।

4. किसानों और मजदूरों की टूटी-फूटी झोंपड़ियों में ही प्यारा गोपाल वंशी बजाता मिलेगा। वहाँ जाओ उसकी मोहिनी छवि निरखो। जेठ-बैशाख की कड़ी धूप में मजदूर के पसीने की टपकती हुई बूंदों में उस प्यारे राम को देखो। दीन-दुर्बलों की निराशा भरी आँखों में उस प्यारे कृष्ण को देखो। किसी धूल भरे हीरे की कणी में उस सिरजनहार को देखो। जाओ, पतित, अछूत की छाया में उस बिहारी को देखो। (पृष्ठ-20)

संदर्भ तथा प्रसंग-प्रस्तुत गद्यांश हमारी पाठ्य-पुस्तक 'हिंदी प्रबोधिनी' के 'दीनों पर प्रेम' नामक पाठ से लिया गया है। लेखक कहता है कि ईश्वर के दर्शन पाने हैं तो मंदिर, मस्जिद, गिरजों और गुरुद्वारों में मत भटको। वह तो तुम्हें पसीना बहाते .मजदूरों, किसानों, अनाथों, पतितों और अछूतों के बीच मिलेगा। उनकी सेवा करो, वे ही भगवान के प्रत्यक्ष स्वरूप हैं।

व्याख्या-लेखक धन-वैभव के अहंकार में डूबे लोगों से कह रहा है कि यदि वे ईश्वर को दीनबन्धु नाम से पुकारते हैं। तो उन्हें उसके दर्शन के लिए गरीबों, किसानों की टूटी झोंपड़ियों में जाना चाहिए। उनकी सेवा करनी चाहिए। उन दीनजनों में ही भगवान की छवि नजर आएगी। भयंकर गर्मी में परिश्रम करते, पसीना बहाते बेहाल मजदूरों की सहायता करो।

उनकी पसीने की बूंदों में तुम्हें भगवान के दर्शन होंगे। दीन-दुखियों की निराश आँखों में ही वह दीनबन्धु निवास करते हैं। किसी निर्धन परिवार के धूल में खेलते बालक को जाकर देखो। वही तो बालकृष्ण का सच्चा स्वरूप है। दरिद्रनारायण ईश्वर इन धन के बल पर सजाए-बनाए मंदिरों में और हजारों रुपयों से खड़े किए गए भजन-सत्संग के मण्डपों में नहीं मिलेगा। वह तो पापी और अछूत कहकर ठुकराए गए, मंदिरों में प्रवेश से रोके गए, दरिद्र मानवों के बीच मिलेगा। दीनबन्धु और दरिद्रनारायण को पाना है, तो दीन-दरिद्रों की सेवा करनी होगी।

विशेष-
(1) भाषा सरल है। भावों के अनुकूल शब्दों का प्रयोग हुआ है।
(2) शैली भावुकता से पूर्ण और हृदय को छू लेने वाली है।